

 EDUINDEX®	Think India (Quarterly Journal) ISSN: 0971-1260 Vol-23, Special Issue-03 in collaboration with Indira Gandhi Government Girls Degree College, Rae Bareilly, -229001, Uttar Pradesh, India Sponsored by Dept. of Higher Education , Govt. of U.P.	
--	---	---

NATIONAL SEMINAR ON YOGA FOR WELLNESS AND POSITIVE HEALTH
14th - 15th December, 2019 (Saturday-Sunday)

;kx e' foi';uk dk l eko'k

सुनील दत्त

शोध छात्र – वी०एस०एस०डी०पी०जी० कालेज, कानपुर

(सम्प्रति— प्रवक्ता भूगोल, शि०ना०सि०वि०म०इ०का० गौरा, रायबरेली)

डा० अरुणा कुमारी, शोध निर्देशिका, भूगोल विभाग,

वी०एस०एस०डी०पी०जी० कालेज, कानपुर, उ०प्र०

सारांश

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के नाते अपनी सभी गतिविधियों को समाज में रहकर सम्पादित करता है। इन गतिविधियों के सम्पादन में उसे तमाम झंझावतों का सामना करना पड़ता है। इन झंझावतों से निपटने के लिए प्रत्येक मनुष्य को तन, मन और वाणी से स्वस्थ रहना बेहद जरूरी है। यौगिक क्रियाओं से तन-मन और वाणी को नियन्त्रित, सन्तुलित और अनुशासित किया जा सकता है। इन यौगिक क्रियाओं में विपष्यना (विपस्सना) समाहित है। योग दर्शन के सूत्रधार पतंजलि ने योग के सम्बंध में जिस प्रकार कहा है— “योग चित्त की वृत्तियों का निरोध है।” उसी प्रकार सम्यक सम्बुद्ध ने भी लगभग 2500 वर्ष पहले कहा था— “मन को वास्तविक रूप से जानना, मन के विकारों को दूर करना, मन को परिषुद्ध और निर्मल करना ही विपष्यना है।” मनुष्य के समस्त पुण्य और पाप कर्म सबसे पहले उसके मन में पैदा होते हैं। अर्थात् सभी अच्छे और बुरे कार्यों की उत्पत्ति पहले मन में होती है।

धम्मपद में भी कहा गया है—

“मनोपुब्बङ्गमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया,

मनसा चे पसन्नेन, भासति वा करोति वा।

ततो नं सुखमन्वेति, छायाव अनपायिनी।।” – धम्मपद यमक वग्गो-2

अर्थात्— “मन सभी प्रवृत्तियों (आदतों एवं विचारों) का अगुआ है। मन ही प्रधान है। ये विचार मन से ही उत्पन्न होते हैं। यदि कोई व्यक्ति प्रसन्न मन से बोलता है या कार्य करता है तो सुख उसका वैसे ही पीछा करता है जैसे मनुष्य का कभी साथ न छोड़ने वाली उसकी छाया पीछा करती है।”

इस प्रकार चित्त या मन का निर्मल होना बहुत जरूरी है। विपश्यना चित्त या मन को निर्मल यानि शुद्ध करने की एक विद्या है। आँखें खोलकर संसार को देखने की एक सीमा होती है किन्तु विपश्यना ध्यान साधना से आँखें बन्द करके अनन्त एवं अदृश्य संसार को बड़ी सरलता एवं सहजता से देखा जा सकता है। अन्दर और बाहर जो जैसा है, उसको उसी रूप में देखने की कला ही विपश्यना है। वर्तमान थकान, तनाव, अषान्ति और क्रोध के इस युग में विपश्यना बेहद जरूरी है।

मूल शब्द—विपश्यना, योग, धम्मपद, अनापानसति, निर्वाण, पारमिता, अष्टांगिक मार्ग, आर्य सत्य।

प्रस्तावना

उद्देश्य

1. विपश्यना ध्यान साधना की व्याख्या करना।
2. विपश्यना के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालना।
3. विपश्यना एवं योग के मध्यम अन्तर्सम्बन्धों की व्याख्या करना।
4. विपश्यना हेतु ध्यान देने योग्य बातों की समीक्षा करना।
5. विपश्यना की प्रासंगिकता को वैश्विक पटल पर स्थापित करना।
6. विपश्यना शिविरों के कुशल संचालन की रूपरेखा प्रस्तुत करना।

विधि तन्त्र

प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोत के रूप में विपश्यना के आचार्यों एवं बौद्ध भिक्षुओं से साक्षात्कार किया गया है। धम्मथली विपश्यना केन्द्र जयपुर का अवलोकन किया गया है। बौद्ध उपासकों एवं साधकों से विपश्यना साधना के विविध आयामों को समझने का प्रयास किया गया है। द्वितीयक स्रोत के अन्तर्गत पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित आलेखों का अध्ययन एवं विश्लेषण कर निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया गया है। कम्प्यूटर, इण्टरनेट एवं सोशल मीडिया का भी सहारा लिया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या

विपश्यना ध्यान की एक सरल एवं सहज विधि है, जिससे मन को वास्तविक शान्ति प्राप्त होती है। विपश्यना पालि शब्द 'विपस्सना' (वि + पस्सना) से बना है, जिसमें 'वि' का अर्थ है— विशेष रूप से या सूक्ष्मरूप से या पूर्णरूप से और 'पस्सना' का अर्थ है—देखना या जानना या समझना या परीक्षण—निरीक्षण करना या शोध करना या निष्कर्ष निकालना। इस प्रकार कहा जा सकता है कि किसी को परिपूर्ण ढंग से जान समझ लेना ही विपश्यना है। इससे भीतर और बाहर शान्ति और सामंजस्य का अनुभव प्राप्त होता है। विपश्यना चित्त को निर्मल करने की एक विधा, मन को स्थायित्व प्रदान करने की कला व मानस की बुराइयों को शोधित करने की एक औषधि है। *“विविधेन पस्सति ति विपस्सना, विसेसेन पस्सति ति विपस्सना, अनेकांगेन पस्सति ति विपस्सना, विभज्जेन पस्सति ति विपस्सना”*

अर्थात्—विविधता से, विशेष रूप से, अनेक अंगों से विभाजन या पृथक्करण करके देखने को ही विपश्यना कहते हैं। जब हम किसी वस्तु अथवा परिस्थिति को खण्ड-खण्ड करके साक्षी भाव से देखते हैं, तब पता चलता है कि जो वस्तु अथवा स्थिति जैसी दिखती है, वास्तव में वैसी नहीं है, गहराई में जाकर विश्लेषण करने पर पता चलता है कि वास्तविक सच्चाई कुछ और है। ऐसा पता लगने लगता है कि कोई वस्तु या स्थिति स्थिर नहीं है, बल्कि क्षण-प्रतिक्षण उसमें कुछ न कुछ परिवर्तन हो रहा है। जब इस सत्य का अनुभव होने लगता है तब मनुष्य भासमान सत्य को निस्सार जानकर अपने दैनिक व्यवहार में वास्तविक सत्य को अपनाने लगता है। उत्तेजनाओं और आशंकाओं से त्रस्त नहीं होता और होश का जीवन बिताने लगता है। जैसे ही वह होश का जीवन बिताने लगता है, उसकी काया, वाणी और चित्त के कर्म सुधरने लगते हैं। जैसे-जैसे इन कर्मों में सुधार आने लगता है वैसे-वैसे वह मानसिक तनावों से मुक्त होने लगता है और अपने अन्तः स्थल में शान्ति का अनुभव करने लगता है। इसके फलस्वरूप चित्त से सम्बंध रखने वाले अनेकों रोगों का शमन होने लगता है और व्यसन उखड़ने लगते हैं। यदि कोई इसका निरन्तर अभ्यास करता रहे तो कदम-कदम आगे बढ़ता हुआ अपने मानस को विकारों से पूरी तरह मुक्त कर नितान्त विमुक्त अवस्था का साक्षात्कार कर सकता है और अपने जीवनकाल में ही निर्वाण सुख को प्राप्त कर सकता है।

ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि

विपश्यना भारत की एक अत्यन्त पुरातन ध्यान साधना विधि है। इसे आज से लगभग 2550 वर्ष पूर्व तथागत बुद्ध ने खोज निकाला था। उन्होंने अपने बुद्धत्व लाभ के 45 वर्षों में जो अभ्यास स्वयं किया और लोगों को करवाया, इससे जो उनको और अन्य लोगों को लाभ प्राप्त हुआ, विपश्यना उसी का सार है। बुद्ध के समय में बड़ी संख्या में लोग विपश्यना के अभ्यास से अपने दुःखों से मुक्त हुए और जीवन के सभी क्षेत्रों में ऊँची उपलब्धियाँ हासिल कर पाये। समय के प्रवाह में यह ध्यान साधना भारत एशिया महाद्वीप के अन्य देशों में फैल गयी और वहाँ पर फलती-फूलती रही, लोगों का कल्याण करती रही। बुद्ध के परिनिर्वाण के लगभग 500 वर्षों बाद यह कल्याणकारी विद्या किन्हीं अवांछित तत्वों के सम्मिश्रण से विकृत हो गयी, जिससे वांछित परिणाम आने बन्द हो गये। कालान्तर में यह विद्या भारत से सर्वथा विलुप्त हो गयी। धीरे-धीरे इसकी शुद्धता नष्ट हो गयी। केवल म्यामार (बर्मा) में इस विधि के प्रति समर्पित आचार्यों की एक शृंखला के कारण यह अपने शुद्ध रूप में कायम रह पायी। पिछले 2000 वर्षों में वहाँ के निष्ठावान आचार्यों की परम्परा ने पीढ़ी दर पीढ़ी इसको अपने वास्तविक रूप में अक्षुण्ण बनाये रखा। इसी परम्परा के प्रख्यात आचार्य सयाजी ऊ श्वा खिन ने म्यामार में इसको जिन्दा रखा। इन्होंने इस विद्या को भारत में पुनर्जीवित

करने वाले आचार्य सत्य नारायण गोयन्का को 1969 में हस्तान्तरित करते हुए इसे आगे बढ़ाने के लिए अधिकृत किया। तब से उन्होंने इस विद्या के प्रचार-प्रसार में अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया। उन्होंने सबसे पहले महाराष्ट्र स्थित इगतपुरी में विश्व का सबसे बड़ा विपश्यना केन्द्र खोला। तत्पश्चात् देश-विदेश में सैकड़ों विपश्यना केन्द्र खोलकर विपश्यना का लाभ लोगों को दिया। यद्यपि आज वे हमारे बीच नहीं रहे। विपश्यना साधना एक सार्वजनीन, सार्वकालिक और सार्वभौमिक साधना विधि है, जिसे कोई भी, कहीं भी, कभी भी इसका लाभ उठा सकता है।

विपश्यना साधना का मुख्य लक्ष्य चित्त की शुद्धता है। इसके माध्यम से साधक अपने अन्दर संग्रहीत राग-द्वेष, भय-मोह, लालच-आसक्ति इत्यादि विकारों, दैनिक जीवन के तनावों, चिन्ताओं, अवसादों और मानसिक बंधनों से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। विपश्यना बुद्ध धम्म की आधार शिला है। विपश्यना से निर्वाण सुख की अवस्था जीवन काल में ही हासिल की जा सकती है।

अर्हत पद की अवस्थायें –

अर्हत पद पाने की चार अवस्थायें हैं—

1&Jkrki..k 2&ldnfxkeh 3&vukxkeh 4&vgrA

ये चारों चित्त की अवस्थायें हैं। इसे जीवित काल में ही प्राप्त किया जा सकता है। चित्त की उच्चतम अवस्थायें केवल ध्यान समाधि और विपश्यना के द्वारा ही प्राप्त की जा सकती हैं। समाधि आर्य अष्टांगिक मार्ग का दूसरा स्कन्द है। शील और प्रज्ञा पहला और तीसरा स्कन्द है। इन स्कन्दों को विपश्यना ध्यान साधना से ही पाया जा सकता है।

विप'यना के प्रमुख सोपान

विपश्यना बुद्ध धम्म की अनुपम देन है। बुद्ध ने इसके द्वारा अपने शरीर का दर्शन किया और चित्त को निर्मल किया। विपश्यना ध्यान के चार सतिपट्ठान हैं—

- (1) कायानुपश्यना :— अपनी काया में क्षण प्रतिक्षण हो रहे बदलाव को दृष्टाभाव से देखना कायानुपश्यना है।
- (2) वेदनानुपश्यना :— शरीर में प्रकट होने वाली दुःखद – सुखद और अदुःखद – असुखद वेदनाओं को दृष्टाभाव से देखना वेदनानुपश्यना है।
- (3) चित्तानुपश्यना :— चित्त में उठने वाले तरह-तरह के विचारों को जो हर पल बदलते रहते हैं, उनके प्रति प्रतिक्रिया किये बगैर दृष्टाभाव से देखना चित्तानुपश्यना है।
- (4) धम्मानुपश्यना :— प्रकृति के नैसर्गिक नियमों के अनुसार जो कुछ भी घट रहा है उसका कोई कर्ता नहीं है, उस पर किसी की सत्ता नहीं चलती है। समस्त प्रकृति अपने नियमों से अपने आप संचालित हो रही है। इस सत्य को दृष्टाभाव से देखना धम्मानुपश्यना है।

इन चारों अवस्थाओं को केवल विपश्यना से ही हासिल किया जा सकता है। स्वयं भगवान बुद्ध को भी बुद्धत्व विपश्यना से ही प्राप्त हुआ था। भारत सहित सम्पूर्ण विश्व के अधिकांश देशों में विपश्यना साधना के दस दिवसीय प्रशिक्षण शिविर आयोजित किये जाते हैं, जिसके मुख्य सोपान निम्न हैं:—

प्रथम सोपान:— दस दिवसीय विपश्यना शिविर के प्रथम सोपान में त्रिशरण (तिसरण) और पंचशील का पालन कराया जाता है। शिविर में प्रतिभाग करने वाले साधकों को दस दिनों तक बिना बोले चुपचाप रहना

होता है। यहां तक कि कोई किसी से इशारों में भी बात नहीं कर सकता है। मोबाइल या फोन से बात नहीं कर सकता है। मन, वाणी और काया से शान्त रहना पड़ता है। संयमित भोजन करना पड़ता है। परिवार से दूर रहना पड़ता है। सुबह जल्दी उठना पड़ता है और रात में जल्दी सोना पड़ता है। पंचशील का पूरा पालन करना होता है। ये पांच शील निम्न हैं:-

¼1) अहिंसा- पाणातिपाता बेरमणी सिक्खापदं समादियामि

अर्थात्- प्राणी हिंसा न करना।

(2) अस्तेय- अदिन्नादाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि

अर्थात्- चोरी न करना।

(3) सदाचार- कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि

अर्थात्- कामवासना या व्यभिचार से दूर रहना।

(4) सत्य- मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि

अर्थात्- झूठ न बोलना।

(5) अप्रमाद- सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि

अर्थात्- मादक द्रव्यों एवं प्रमाद स्थलों से दूर रहना।

इन शीलों का पालन इसलिए आवश्यक है, क्योंकि ऐसा करने से मन की उत्तेजना कम हो जाती है और उत्तेजना रहित मन से साधना का अभ्यास उत्तम ढंग से किया जा सकता है। शीलों के महत्व को समझाते हुए विपश्यना के आचार्य सत्यनारायण गोयन्का जी ने कहा है कि-

शील धम्म की नींव है और समाधि भीत,

प्रज्ञा छत है धम्म की, मंगल भवन पुनीत।

द्वितीय सोपान :- शीलों का व्रत लेने के बाद मन को एकाग्र करना सिखाया जाता है जिसे 'आनापान' कहते हैं। आन + अपान- 'आन' का अर्थ है-आने वाली श्वांस और 'अपान' का अर्थ है-जाने वाली श्वांस। श्वांस के आने जाने को अपने ही अनुभव से अपनी नासिका के दोनों द्वारों पर देखना सिखाया जाता है। श्वांस के अन्दर आने और बाहर जाने को आनापानसति कहते हैं। साढ़े तीन दिनों तक आनापान के द्वारा समाधि का अभ्यास कराया जाता है। सत्य नारायण गोयन्का जी कहते हैं-

ध्यान करें जब श्वांस का, ध्यान सत्य का होय।

कहीं न मिथ्या कल्पना, पथ अवरोधक होय।।

तृतीय सोपान:- इस सोपान में चित्त को शान्त और मन को निर्मल बनाने के लिए समाधि का अभ्यास कराया जाता है। बुद्ध ने जन साधारण को जिन चार आर्य सत्त्यों का उपदेश दिया है, वे निम्न हैं-

(1) सांसारिक जीवन दुःखों से परिपूर्ण है।

(2) दुःखों का कारण है।

(3) दुःखों का अन्त संभव है।

(4) दुःखों के निवारण का उपाय है।

बुद्ध ने दुःखों के निवारण के लिए जो आठ उपाय बताये हैं, उन्हें आर्य अष्टांगिक मार्ग कहा जाता है। यही अष्टांगिक मार्ग बौद्ध धर्म के सार हैं जो निम्न हैं—

(1) सम्यक दृष्टि (2) सम्यक संकल्प (3) सम्यक वाक (4) सम्यक कर्मात्

(5) सम्यक आजीव (6) सम्यक व्यायाम (7) सम्यक स्मृति (8) सम्यक समाधि

निर्वाण सुख की प्राप्ति अष्टांगिक मार्ग से ही संभव है। अष्टांगिक मार्ग की अन्तिम अवस्था समाधि है। विपश्यना के तीसरे सोपान में समाधि तक का सफर समाहित रहता है। समाधि निर्वाण सुख के मार्ग को प्रशस्त करती है। समाधि का अभ्यास करने से अन्दर प्रज्ञा जागृत होती है, उससे अनित्य परिवर्तन का बोध होता है। मन को श्वास के आधार पर एकाग्र करते हुए श्वास को सामान्य व प्राकृतिक रूप में लेते हुए शरीर के भीतर प्रतिक्षण होने वाले परिवर्तनों तथा संवेदनाओं को दृष्टाभाव से, उपेक्षा भाव से यथाभूत जानना सिखाया जाता है। देखते-देखते, जानते-जानते अपने भीतर लगातार वेदना-संवेदनाओं का वास्तविक व नैसर्गिक स्वभाव समझ में आने लगता है। विपश्यना से दस पारमिताओं की सिद्धि प्राप्त कर कोई भी बोधिसत्व बन सकता है। ये पारमितायें इस प्रकार हैं—

(1) निष्क्रमण (2) अधिष्ठान (3) दान (4) शील (5) शान्ति

(6) वीर्य (7) ध्यान (8) प्रज्ञा (9) मैत्री (10) उपेक्षा

इन दस पारमिताओं को हासिल करने की विद्या का नाम विपश्यना है।

विपश्यना के लाभ

विपश्यना के दैनिक अभ्यास से निम्न लाभ होते हैं—

(1) मन एकाग्र होने लगता है।

(2) मन से भय, तनाव, चिंता दूर होने लगती है।

(3) पढ़ाई—लिखाई, खेल—कूद व विविध कलाओं में कुशलता आती है।

(4) कोई भी बात समझने और समझाने की क्षमता बढ़ जाती है।

(5) आत्म विश्वास और सजगता बढ़ती है।

(6) सही व गलत के चयन में सहायता मिलती है।

(7) क्रोध, ईर्ष्या—द्वेष, मोह, प्रमाद से छुटकारा मिल जाता है।

(8) शील, समाधि और प्रज्ञा यानि बुद्धत्व का उदय होता है।

विपश्यना साधना केन्द्र

कुछ प्रमुख विपश्यना साधना केन्द्र इस प्रकार हैं—

- (1) धम्मगिरी, विपश्यना विश्व विद्या पीठ, इगतपुरी, नासिक, महाराष्ट्र।
- (2) धम्मसरोवर, खानदेश विपश्यना केन्द्र टेडरगांव, थुले, महाराष्ट्र।
- (3) धम्माथली, विपश्यना केन्द्र सिसोदिया रानी बाग, जयपुर, राजस्थान।
- (4) धम्मकक्का, सारनाथ, मलदहिया, वाराणसी, उ०प्र०।
- (5) धम्मजननी, लुम्बिनी विपश्यना केन्द्र, लुम्बिनी, रूपानदेही, लुम्बिनी अंचल नेपाल।

निष्कर्ष

बार-बार विपश्यना का अभ्यास करने से शरीर और चित्त का वास्तविक दर्शन होने लगता है। अनित्य, अनात्म और हमेशा बदलते रहने वाले स्वरूप का ज्ञान होने लगता है, जिससे मन वीतरागता, वीत-द्वेषता और वीत मोहता की ओर अग्रसर होने लगता है। जैसे-जैसे राग द्वेष और मोह के बंधन ढीले पड़ने लगते हैं, वैसे-वैसे पहले से संचित विकारों की उदीर्णा होने लगती है और उनकी निर्जरा हो जाती है। परिणामस्वरूप मन में अपूर्ण शान्ति का संचार होने लगता है। काया और चित्त के अनित्य स्वभावी प्रपंच का साक्षी भाव से दर्शन करते करते तत्त्वसम्बंधी आसक्तियों से छुटकारा पाता हुआ साधक परम सत्य का

साक्षात्कार कर लेता है। जो नित्य है, शाश्वत है, ध्रुव है, अमृत है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि विपश्यना पूर्णतयः एक वैज्ञानिक ध्यान विधि है, जिसे सभी सम्प्रदायों के लोग इसका अभ्यास करके लाभ उठा सकते हैं। इसके अभ्यास से अनेकों मानसिक एवं शारीरिक रोग ठीक हो जाते हैं। मन की एकाग्रता और याददाश्त बढ़ती है। कार्यकुशलता में वृद्धि होती है। रचनात्मक गुणों में निखार आता है। नैतिकता और अनुशासन तथा आत्म विश्वास के सद्गुणों में वृद्धि होती है। नशीले पदार्थों के आदी लोगों को इन व्यसनो से मुक्त होने में सहायता मिलती है। मनोविकारों के दूर होने से मन निर्मल, शान्त और प्रसन्न होता है तथा परिवार में सुख और शान्ति बढ़ती है। विपश्यना साधना द्वारा शील-सदाचार का पालनकर, करुणा, मैत्री, मुदिता और समता जैसे अच्च मानवीय गुणों को विकसित कर हम शान्ति और सुखमय जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीकृष्ण, आनन्द, “भगवान बुद्ध, धम्म-सार व धम्म-चर्या”, समृद्ध भारत प्रकाशन, मुम्बई, 2006।
2. बौद्ध, शान्ति स्वरूप, “बौद्धचर्या प्रकाश, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018।
3. दन्त धीरेन्द्र मोहन व चटर्जी सतीश चन्द्र, “भारतीय दर्शन” पुस्तक भण्डार, पटना, 1984।
4. कोसम्बी, धर्मानन्द, “भगवान बुद्ध, जीवन और दर्शन,” लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2005।
- 5- गोयन्का, सत्य नारायण, “धर्म एवं ध्यान द्वारा मानव एकता तथा विश्व शान्ति अभियान”, धम्मगिरी, इगतपुरी, नासिक।